वायरस अनुसंधान से फैला नया डर

पी. बलराम

1940 के दशक में ऑसवाल्ड एवरी द्वारा डीएनए की पहचान को जीन्स की रासायनिक प्रकृति को स्थापित करने की दिशा में पहला कदम माना जा सकता है। इसे 'न्यूमोकोकल ट्रांसफार्मिंग प्रिंसिपल' नाम दिया गया था। 19वीं सदी में मेण्डल जिस जिनेटिक्स को अस्तित्व में लाए थे वह अचानक रसायन शास्त्र से जुड़ी हुआ प्रतीत होने लगी। वॉटसन-क्रिक द्वारा प्रस्तुत डीएनए की द्विकुंडली संरचना ने आनुवंशिकी को ठोस रासायनिक धरातल दिया है। इसे नोबेल पुरस्कार मिले अब ठीक आधी सदी गुज़र चुकी है।

डीएनए की एकरूपीय केमेस्ट्री ने जैविक सूचनाओं के संग्रहण और पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तांतरण की बेहद मज़बूत और समर्थ प्रणाली का खुलासा किया था। डीएनए संरचना की अवधारणा के बाद भी सालों आण्विक जीव-विज्ञान अंधेरे में ही हाथ-पैर मारता रहा। यहां तक कि 25 साल पहले भी शायद ही किसी ने सोचा होगा कि नई सदी आते-आते मानव जीनोम का संपूर्ण अनुक्रम उपलब्ध हो जाएगा। अब तो डीएनए अनुक्रम पता करने की पद्धतियां इस स्तर तक पहुंच गई हैं कि कंपनियां कीमत लेकर आपका अनुक्रम बताने की स्थिति में हैं।

क्लोनिंग शब्द का इस्तेमाल तो अब बेहद आम है। संश्लेषण जीव विज्ञान नामक नए विषय का विस्तार हो रहा है। शानदार तरीके से विकसित उपकरणों के धरातल पर भौतिक शास्त्र और रसायन शास्त्र से आयातित तकनीकों ने अणुओं और उनके बीच के पारस्परिक सम्बंधों की लगभग परमाण्विक स्तरीय दृष्टि उपलब्ध करवाई है। यही कोशिकीय रसायन शास्त्र को परिभाषित करता है।

कोशिका और उसके हज़ारों रासायनिक घटक अब जीव विज्ञान में चर्चा की इकाई हैं। रसायन कोशिकाओं और जीवों के बीच पारस्परिक संवाद व परस्पर क्रियाओं को संभव बनाते हैं। जीव विज्ञान के क्षेत्र में हुए विकास से स्वास्थ्य और कृषि के क्षेत्र में व्यापक क्रांति आई है। पिछली आधी सदी में जीव विज्ञान में हुए बदलाव ने इस विषय को विज्ञान की लोक-धारणा में अग्रिम पंक्ति में खड़ा कर दिया है। केवल सूचना एवं प्रौद्योगिकी ही ऐसा विषय है, जो जीव विज्ञान को टक्कर दे रहा है। आज तो जैव प्रौद्योगिकी, सूचना प्रौद्योगिकी और नई उभरती नैनो प्रौद्योगिकी के समायोजन से एक नवीन साहसिक दुनिया की पदचाप सुनाई दे रही है। जीव विज्ञान में 'जीन क्रांति' ने 'जिनेटिक इंजीनियरिंग' की संभावना को काफी बढ़ा दिया है। यह क्षेत्र कभी कल्पनाशील विज्ञान कथा लेखकों का प्रिय विषय हुआ करता था। अब इस सम्बंध में कई तार्किक सवाल पूछे जा सकते हैं, जैसेः क्या नई विशेषताओं वाले नए जीव सृजित किए जा सकते हैं? क्या सदियों पहले खत्म हो चुके जीवों को फिर से जिलाया जा सकता है?

माइकल क्रिकटॉन ने अपनी फिल्म *जुरासिक पार्क* में डायनासौर की कल्पना को पर्दे पर साकार कर दिखाया था। जीव वैज्ञानिक क्रिकटॉन की वैज्ञानिक अशुद्धताओं से सहमत नहीं थे और इसलिए उन्होंने *जुरासिक पार्क* के दृश्यों को अविश्वसनीय करार दिया था।

पुनर्मिश्रित डीएनए प्रौद्योगिकी और जिनेटिक इंजीनियरिंग के संयोजन के शुरुआती दिनों में जीव विज्ञान में नए आविष्कारों को लेकर काफी आशंकाएं व्याप्त थीं, यहां तक कि आणविक जीव वैज्ञानिक भी इन्हें लेकर आशंकित थे। वर्ष 1975 में डीएनए प्रौद्योगिकी के उभरते क्षेत्र के कुछ प्रमुख शोधकर्ताओं ने असिलोमार में एक बैठक आयोजित की थी, जो कुछ मानदंड स्थापित करने और आशंकाओं को दूर करने में बेहद अहम साबित हुई। इसमें तय हुआ कि लोगों के स्वास्थ्य को खतरे में डाले बगैर अनुसंधान कार्यों में जिनेटिक्स का इस्तेमाल करने की अनुमति दी जा सकती है। वर्ष 1980 के रसायन नोबेल पुरस्कार विजेता पॉल बर्ग 1975 की इस बैठक की पृष्ठभूमि और उसके उन परिणामों की व्याख्या

करते हैं, जिसने जिनेटिक इंजीनियरिंग का नया क्षेत्र खोला था। बर्ग लिखते हैं कि यह कांफ्रेंस विज्ञान के लिए एक बहुत ही असाधारण युग और विज्ञान नीति की सार्वजनिक चर्चा की शुरुआत थी।

एच5एन1 फ्लू वायरस के सम्बंध में प्रकाशित दो शोध पत्रों से महत्त्वपूर्ण प्रायोगिक जानकारियां हटाने के हाल के कदम के बाद निस्संदेह असिलोमार कांफ्रेंस के अनुभवों को बार-बार याद किया जाएगा। इन शोध पत्रों को *साइंस एंड नेचर* में प्रकाशित करने पर विचार किया जा रहा है। ये शोध पत्र इस बात को स्थापित करते हैं कि एच5एन1 वायरस, जिनमें कि एक विशिष्ट प्रोटीन हीमग्लूटिनिन होता है, वह किसी भी प्राणी में हस्तांतरित हो सकता है। इन अध्ययनों से यह समझ बढ़ाने में मदद मिल सकती है कि प्रकृति में पाए जाने वाले वायरस किस तरह से मनुष्यों को संक्रमित करने में समर्थ हो जाते हैं।

उक्त शोधकर्ताओं ने घातक पक्षी इंफ्लूएंजा एच5एन1 से सम्बंधित रिसर्च में आगे के कार्य को 60 दिनों तक स्वेच्छा से रोककर एक अभूतपूर्व कदम उठाया था। इस अध्ययन से जो नया वायरस सामने आया है, वह स्तनधारियों में कहीं अधिक संक्रामक है। इन शोधकर्ताओं द्वारा स्वयं पर आरोपित इस प्रतिबंध से दुनिया भर के संगठनों और सरकारों को इस शोध कार्य से उपजी चुनौतियों का समाधान निकालने के लिए कुछ और समय मिल सकेगा।

जैव सुरक्षा से जुड़ी चिंताओं के मद्देनज़र वैज्ञानिक शोध पत्रों की समीक्षा और संभावित 'सेंसर' जैसा कदम अभूतपूर्व है। 'जैव सुरक्षा के लिए राष्ट्रीय विज्ञान सलाहकार बोर्ड' (एनएसएबीबी) ने तो *साइंस* को उन महत्त्वपूर्ण सूचनाओं को हटा देने की सलाह दी थी जो उन प्रयोगों को दोहराने के लिए बेहद आवश्यक हैं। विज्ञान पत्रिकाएं इससे सहमत हैं, लेकिन उनका तर्क है कि सरकार जानकारियों को साझा करने के सम्बंध में पहले कोई एक 'पारदर्शी योजना' तो प्रस्तुत करे। इस मुद्दे पर *नेचर* में प्रकाशित एक फीचर में दस विशेषज्ञों की राय दी गई है। हालांकि सभी इस मुद्दे पर सहमत नहीं हैं। इस विवादास्पद शोध पत्र के लेखकों में से एक रॉन फुशिएर पूछते हैं, "क्या यह उचित है कि चर्चा पर केवल एक ही देश का आधिपत्य हो जबकि वह विषय दुनिया भर के वैज्ञानिकों और सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवा के लिए अहम है?"

एच5एन1 से सम्बंधित शोध पत्र को लेकर सबसे बड़ा भय यही है कि अधिक संक्रामक इंफ्लूएंज़ा वायरस का विस्तृत प्रोटोकॉल प्रकाशित होने से कहीं जैव आतंकियों के लिए नई राह न खुल जाए। हालांकि कई विस्फोटकों और यहां तक कि परमाणु हथियारों का निर्माण करने से सम्बंधित प्रक्रियाओं की जानकारी भी उपलब्ध है, लेकिन जैव हथियारों के गलत हाथों में पड़ जाने को कहीं ज़्यादा गंभीर खतरा माना जा रहा है। ऐसा इसलिए भी है क्योंकि इससे मानव आबादी में रोगजनक वायरस का संक्रमण बहुत धीरे-धीरे और बगैर किसी आहट के फैलाया जा सकता है। इसका दूसरा खतरा यह है कि इससे प्रयोगशालाओं में संक्रमण फैलने की भी आशंका रहेगी। इसलिए एल. क्लॉट्स और ई. सिलवेस्टर कहते हैं, "जबकि मानव निर्मित महामारी का खतरा सामने नज़र आ रहा है, नीति-नियंताओं को यूं ही हाथ पर हाथ धरकर नहीं बैठे रहना चाहिए।" अधिकांश विशेषज्ञों को इन शोध पत्रों में जो बात महत्त्वपूर्ण लगती है, वह यह है कि इनसे हमारी समझ बढ़ेगी कि वायरस एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति में कैसे पहुंचता है।

इंफ्लूएंज़ा वायरस अनुसंधान में कार्यरत विशेषज्ञों की स्मृतियों में एच5एन1 एपिसोड के बहाने वह बहस भी ताज़ा हो जानी चाहिए जो 1918 में स्पैनिश इंफ्लूएंज़ा महामारी के लिए ज़िम्मेदार वायरस को लेकर हुई थी। नवम्बर 1918 में दफनाए गए अलास्का के एक इंफ्लूएंज़ा मरीज़ के फ्रोज़न फेफड़े से प्राप्त कोशिका के जिनोमिक आरएनए से इस वायरस का जीनोम फिर से पैदा कर लिया गया था। यह वायरस बहुत घातक था और 1918 में दुनिया भर में करीब पांच करोड़ लोग इसी की वजह से मारे गए थे। अकेले अमरीका में ही 6 लाख 75 हज़ार लोगों की मौत हुई थी। मौजूदा एच1एन1 वायरस अपेक्षाकृत कहीं अधिक 'उदार' है। 1918 के स्पैनिश वायरस के पुनर्जीवन से उसकी अति-घातकता की क्रियाविधि की पहचान करने में आसानी हुई, जिससे उसका सामना किया जा सकता है। इस

पुनर्जीवित वायरस को आज मौजूदा एंटी वायरल दवाओं जैसे ओसेल्टामिविर (टैमीफ्लू) और एमेंटाडाइन (सिमट्रेल) से खत्म किया जा सकता है। इतना ही नहीं, मौसमी फ्लू वैक्सीन का भी इस पर असर होता है। 1918 के स्पैनिश फ्लू वायरस के शोध पत्र के लेखकों में से एक ने एच5एन1 पर जारी विवाद पर कड़ी टिप्पणी करते हुए कहा है कि जीवन-रक्षक विज्ञान की राह में गतिरोध नहीं होना चाहिए। 1918 के वायरस के पुनर्जीवन की कहानी को याद करते हुए वे लिखते हैं, ''अगर हम उस वायरस को फिर से जीवित न करते और उसके नतीजे समाज तक न पहुंचाते तो हम आज भी इस भय में जी रहे होते कि कहीं कोई सिरफिरा वैज्ञानिक स्पैनिश फ्लू को जिलाकर दुनिया में न छोड़ दे। आज हम जानते हैं कि वैसी भयावह स्थिति अब संभव नहीं है।''

मज़ेदार बात यह भी है कि 2005 के शोध पत्र पर भी एनएसएबीबी ने विचार किया था और अंततः यह अपने पूर्ण स्वरूप में प्रकाशित हुआ था। एच5एन1 शोध के आलोचकों ने कुछ बहुत ही भयावह आशंकाएं जताई हैं। डी.ए. हेंडरसन लिखते हैं, ''यह ऐसा वायरस है जो पीड़ित लोगों में से आधे को मौत के मुंह में उतार सकता है। यह किसी भी अन्य महामारी से कहीं घातक है। यह एक ऐसे जैविक हथियार के रूप में सामने आ सकता है, जिसकी कल्पना विज्ञान की कथाओं में भी नहीं की गई होगी।''

कई मायनों में इस ताज़ा बहस ने उस मूड की याद ताज़ा कर दी है, जो 1975 की असिलोमार कांफ्रेंस पर हावी था। करीब तीन दशक बाद इस कांफ्रेंस के बारे में लिखते हुए पाल बर्ग पूछते हैं, ''एक प्रभावी सुरक्षा व्यवस्था की नींव डालने के अलावा असिलोमार कांफ्रेंस ने क्या हासिल किया?'' इसका जवाब वे खुद ही देते हैं- ''मुझे लगता है कि उस समय वैज्ञानिकों ने लोगों का विश्वास हासिल कर किया था, जो बायोटेक्नॉलॉजी के क्षेत्र में आज कार्य कर रहे शोधकर्ताओं के लिए कहीं अधिक कठिन है।'' अंत में वे कहते हैं, ''असिलोमार का सबक हम सभी वैज्ञानिकों के लिए है : उभरते ज्ञान या शुरुआती प्रौद्योगिकी से उत्पन्न होने वाली चिंताओं से उबरने का सबसे अच्छा तरीका यही है कि सरकारी संस्थाओं में कार्यरत वैज्ञानिक जितनी जल्दी हो सके, व्यापक जनहित के साथ तालमेल बनाकर उस पर नियंत्रण स्थापित करने के सर्वोत्तम तरीके विकसित करें। अगर कार्पोरेट वैज्ञानिक उस शोध पर हावी हो गए तो यह मुश्किल हो जाएगा।'

1970 के दशक के मध्य में आतंकवाद इतनी बड़ी समस्या नहीं थी। मगर 'राष्ट्रीय सुरक्षा' के पर्दे में ऐसे अनुसंधान किए गए थे, जिनसे सार्वजनिक खतरे को लेकर चिंता उठी होती। बर्ग ने कार्पोरेट हितों की वजह से नियंत्रण करने में आने वाली कठिनाइयों का उल्लेख किया। इसी तरह यह भी उतना ही बड़ा सच है कि कई रिसर्च विकसित देशों के सुरक्षा कवच में दशकों तक कैद रहते हैं।

हालांकि जीव विज्ञान के क्षेत्र में हुई प्रगति से कई बार चिंताएं होती हैं, लेकिन नई प्रौद्योगिकी से हमें अतीत के बारे में समझ भी हासिल होती है। लंदन के पास स्थित कब्रिस्तानों में 1347-51 के दौरान दफन लोगों की हड्डियों व दांतों से प्राप्त डीएनए से मिली जानकारी से *येरसिनिया पेस्टिस* बैक्टीरिया के जीनोम को पुनर्जीवित किया जा सका। मध्यकाल में फैले प्लेग के लिए यही बैक्टीरिया ज़िम्मेदार था। प्राचीन रोगाणुओं की विशेषताओं का वर्गीकरण करने से निस्संदेह संक्रामक बीमारियों के विकासक्रम को लेकर हमारी समझ बढ़ेगी। सवाल यह भी है कि क्या पूरे बैक्टीरिया को पुनजीर्वित किया जा सकता है? इसका जवाब तो समय ही देगा, लेकिन *नेचर* में लिखी टिप्पणी कहती है कि समूचे बैक्टीरिया के पुनर्जीवित होने की कल्पना भयावह ज़रूर है, लेकिन आज उपलब्ध दवाइयों से इनका सामना आसानी से किया जा सकता है। डीएनए एक ऐसा इतिहास बयान कर सकता है, जिसे पढ़ना अभी बाकी है। आधुनिक विज्ञान के भूले-बिसरे नायकों में से एक ऑसवाल्ड एवरी वर्तमान घटनाओं को देखकर निश्चित रूप से दांतों तले अंगुली दबा लेते। ***(स्रोत फीचर्स)***